श्रीश्रीगौरांगविधुर्जयति

श्री गीतगोविन्द

(ब्रजभाषा में)

प्रकाशक—

कृष्णदास

❀ श्री श्री गौरांगविधुर्जयति ❀

ब्रजभाषा में

श्री गीतगोविन्द

श्री श्री रसजानिवैष्णवदासजी कृत

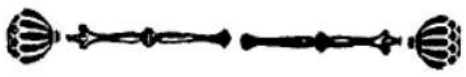

श्री कृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द
हरेकृष्ण हरेराम राधे गोविन्द
भज—निताई गौर राधेश्याम
जप—हरेकृष्ण हरेराम ।

रसिक प्रवर पूज्य श्री बाबा श्री गौरांगदासजी के कृपा पात्र बरसाना (कोसी) निवासी, लाला वनखण्डि के आत्मन, गौरीनष्ठ लाला चतुर्भुज (चेतराम) जी के संपूर्ण सहाय से मुद्रित।

प्रथम भाग
गौरपूर्णिमा
मूल्य ।)
प्रथमावृत्ति १०००

प्रकाशक—
बाबा—कृष्णदास
कुसुमसरोवर
पो० राधाकुण्ड
ज़िला मथुरा।

सर्वाधिकार सुरक्षित हैं।

दो शब्द

ग्रंथकार का सूक्ष्म परिचय यह है कि आप श्री निवास आचार्य्य प्रभु के शिष्य श्री मनोहरदासजी के समय से कुछ काल पश्चात हुए है। आप के गुरु का नाम श्रीहरिजीवन था तथा आप भक्तमाल के प्रसिद्ध टीकाकार श्री प्रियादास जी के पौत्र थे। इस विषय में आप स्वयं अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि—

श्री प्रियादास रस रासि को पौत्र वैष्णवदास।
ताही कौ रसजानि तिन कीनौं नाम प्रकाश।
श्रीहरिजीवन गुरु कृपा पाय सोई रसजानि।
श्रीभागवत महात्म की भाषा करी वखानि॥
(भागवत माहात्म्य के परिशिष्ट)

श्री प्रियादास रसरास की पाय कृपा रस जानि।
अगम कियौ निपटै तृतीय स्कन्ध वखान॥
(इसी प्रकार समस्त स्कन्धों के अन्त में दिया है॥)
श्रीरूप सनातन रसिक रस इकठां कियौ निचोय।
तिन विन चांसत छूछकों तिनें न पूँछ विगोय॥
रसिक बरनि मनोहर के प्रियादास जस बास।
तासु हिये रस रासि कौ कृपा विलास प्रकाश।
श्री हरि की जीवनि सदा हरि ही जीबन नित्त।
र स राधा रूप कों हरि हि जिवावत मित्त॥
(द्वादसस्कन्ध के अन्त में)

श्री प्रियादासजी महाराज को इस संसार में कौन नहीं जानता। आप श्री मनोहरदासजी के शिष्य तथा आचार्य्य प्रभु के प्रशिष्य थे। आप निःसन्देह माध्वगौडेश्वर सम्प्रदाय में परम रसिक धुरन्धर विद्वान हुए। आप की वाणी मन्दाकिनी में किसने गोता नहीं लगाया। आपकी भक्ति भावना तथा रसिकता से प्रसन्न होकर हीं श्रीनाभाजी ने भक्तमाल की टीका रचने की आज्ञा दी थी।

इस प्रकार सार गर्भ कवित्त तथा उसकी रचना शैली अन्त्र साहित्य भण्डार में कहीं देखने में नहीं मिलती है। यह तो प्रेमपुरुषोत्तम कलिपावनावतार भगवान श्री गौरांगदेव जू की असीम कृपा का ही परिचय तथा उन प्रेमावतार प्रभु के मनोहर चरण कमल का ध्यान का फल है। "फलेन फल कारण मनुमीयते" यह उक्ति सचमच ही यहाँ देखने में आती हैं। उन श्रीप्रियादास जी के सम्पर्क में उनकी कृपा द्वारा परम रसिक होकर श्रीवैष्णवदासजी जगत विख्यात तथा एतादृश मनोहर काव्य रचना में समर्थ हुए। आप का उपनाम रसजानी था। आप अपने रचित ग्रंथों के मंगलाचरण में निज इष्ट तथा उपास्यदेव श्री राधाकृष्ण मिलित विग्रह भगवान् श्री कृष्णचैतन्यदेवजू का मंगल इस प्रकार पाठ करते हैं।

यथा—रसिक भूप हरि रूप पुनि श्रीचैतन्यस्वरूप।
हृदै कूप अनुरूप रस उमड्यौ वहै अनूप॥
(भागवत महात्म्य तथा प्रत्येक स्कन्ध के आदि में)

वन्दि कृष्ण चैतन्य दुति करै आनन्द जो।
कहों गीत गोविन्द सुने होय महानन्द सों॥
(प्रस्तुत गीत गोविन्द में)

आपके द्वारा रचित समस्त श्रीमद्भागवत का भाषानुवाद है। यह विशुद्ध ब्रजभाषा में चौपाई छन्दों में लिखा गया है। प्रत्येक अध्याय के प्रारम्भ में दोहा छन्द से अध्याय का संक्षेप मनोहर दिग्दर्शन किया गया है। मूलश्लोक के शब्दों को लेकर ज्यों के त्यों सरल सरस ब्रजभाषा में कहना यह एक अलौकिक शक्ति का परिचयायक है। ग्रंथकार की विशाल विद्वत्ता का द्योतक यह ग्रन्थरत्न है। ग्रन्थ की कुछ प्राचीन प्रतियां देहली नगर में उपस्थित है। समय पाकर इस विशाल ग्रन्थरत्न को भी प्रकाशित करने की इच्छा है। प्रस्तुत गीतगोविन्द में ग्रन्थकार ने अपनी जिस विशाल कवित्व शक्ति का परिचय दिया है यह साहित्य जगत में अद्वितीय तथा अतुलनीय है। आपने अपने संप्रदाय के प्राचीन आचार्य्य श्री

जयदेव गोस्वामी जी के द्वारा रचित श्री गीत गोविन्द जैसे महान काव्य को सन्मुख रख कर उस के शब्दों से सरल तथा सरसता के साथ ब्रजभाषा में सर्व साधारण के वोधार्थ लिखा है। इस ग्रन्थ का रचना काल सं० १७७७ है। निःसन्देह श्री भाषा भागवत का रचना काल उस के पश्चात है। भागवत का रचना काल सं० १८२२ से लेकर १८३१ सं० पर्य्यन्त है यह श्रीभागवत के समस्त स्कन्धों के अन्त में निर्देश किया है। लग भग १५००० चौपाई से यह ग्रन्थ वना हुआ है। प्रस्तुत भाषा गीत गोविन्द रसिक समुदाय के सन्मुख है आशा है कि रसिक मंडली श्री जयदेव जी द्वारा रचित मूल गीत गोबिन्द के समकक्ष रख कर इस सरल सानुगत मनोहर ब्रजभाषा पदावली से युक्त श्री रसजानी वैष्णबदासजी द्वारा विरचित भाषा गीत गोविन्द का रसास्वादन करेंगे। श्री वृन्दावनस्थ कालीदह निवासी, ब्रजभाषा के मर्मज्ञ रसिक प्रवर, अनेक वाणीयों के संग्रह कर्त्ता वावा श्रीवंशीदास जी के पाश सर्व प्रथम इस पुस्तक की प्राचीन लिपी देखने तथा प्रतिलिपी करने का सौभाग्य मिला। दूसरी प्रती श्री नन्दकिशोर जी मुकुटवाले लोई बाजार वृन्दावन निवासी से प्राप्त हुई। इसलिये में तथा रसिक समुदाय उन दोन महानुभाव से ऋणी है। वरसाना (कोसी) निवासी लाला वनखण्डि के आत्मज, ब्रज के प्रसिद्ध मान्य गन्य परम प्रेमी रसिक वर पूज्य श्री गौरांगदास जी के कृपापात्र, लाला चतुर्भुज (हरि सम्वन्धिनाम श्री चैतन्यदास, प्रसिद्ध नाम चेतराम) जी के सम्पूर्ण आर्थिक सहाय से इस समय यह ग्रन्थ प्रकाश करने का समर्थ हुआ हूँ। महाप्रभु श्री गौरांगदेव जू आप का मंगल करें। इति।

विनीत

कृष्णदास

कुसुमसरोवर

श्रीगीतगोविन्द

वन्दि कृष्ण चैतन्यचन्द दुंति करै अनंद जो।
कहों गीतगोविन्द सुने होय महानन्द सों ॥१॥
रसिक अशेषनिकौ नरेश जयदेव भेव वित।
कियौ अमल रसपान क्यों वेरस लहै समल चित ॥२॥
ता रस कौ ऊज्हार सार सौरभ सरसानौ।
तिहि हित रसिक समूह व्यूह मधुकर घुमड़ानौ ॥३॥
तिन में इक रस कौ अपात्र कनमात्र पियौ तिन।
श्री प्रेम समूह कौ कृपापात्र पायौ सुपात्र जिन ॥४॥

चौ०—सुनौ रसिक रसवात सुहाई। पिय की प्राप्ति भांति द्वै गाई॥
एक सद्य इक क्रम करि अहौ। सद्य प्राप्ति मिलवौई लहौ ॥५॥
अति उत्कंठा विरह दशा जो। भोगि मिलै क्रमनाम प्राप्ति सौ॥
वैरागी अनुरागी होई। इनहीं कों गावत सब कोई ॥६॥
रागहीन पावै वैरागी। रागी को पावे अनुरागी॥
दुहुविधि वैरागी की पावनि। दुतिय स्कंध कही मन भावनि॥७॥
अनुरागी को पावनि जोई। श्री जयदेव कही हैं सोई॥
पावनि मै धोखो है नाहीं। तात्पर्य्य पै सुख के माँहीं ॥८॥
जाते सुख हू द्वै विध गायौ। सो सुनि लेहु रसिक मन भायौ॥

कवित्त—असर्वानुभव पूर्व सरवानुभूत इक,
सरवानुभवपूर्व सरवानुभूत पुनि।
इनके विना न नीकों जानत जे जान जन,
पहलौ अखंड प्राय दूजौ है अखंड सुनि।
शुक की सी नांही जयदेव इह भाई कहयौ,
पहलौ पहल संक्षेप ही में लीजिये गुनि।
आगे रसाधार रसिकनि कौ अधार सब,
रसनि कौ सार नीके वरन्यौ वनाय चुनि॥

निसि अंधियारी घटा घुमडी है कारी भारी,
दीसत न भमि भूमि रहे हैं तमालतर।
प्यारौ बंधि प्यार सों हजारवार कुंजद्वार,
चूकत ही रह्यौ में न गई ताते ताके डर॥
प्यारी सुकुमारी यह मन में विचारी आज,
आप ही विहारी जू कौं लै चलौ निकुंज घर।
चले वन कुंज मग रले सुखपुंज भीर,
यमुना के तीर वीर क्रीडत सुघर बर॥१०॥

स०—जिह चीत्यौ है वानी चितेरी ने चित्तसु आपने चित्र चरित्रनि सों
रमणीय रमारमणी पद गाय दिखावत भाव विचित्रनि सों।
सु कहै जयदेव पिया हरिदेव की केलि को भेव पवित्रनि सों
पर कूरनि मित्रनि सौं सु दुराव छिपावन पूरन मित्रनि सों॥११॥

दो०—रंग रावटी कवि हृदय काव्य वधूटी आय।
मुख मोखा ते उझकि तिन दीने रसिक विछाय॥१२॥
चहै रसीलौ ध्यान हरि अथवा तियनि विलास।
तो कोमल कमनीय मधु सुनि जयदेव हुलास॥१३॥

चौ०—श्री जयदेव रसिकवर भारी। काढे द्वै श्रोता अधिकारी॥
इक विषई इक सरस उपासक। दुहुनि मांहि आसक्ति लई इक॥
विषई हू सुरसिक ह्वै जैहै। पाल परै ज्यौं आंव मिठै है॥
विषयी हू यह विषय सुनै जब। विषय त्यागि इतही ढरिहैं तब॥

दो०—जौ कबहू कि कहौ अहौ हे कविराज अनेक।
तिन ही के सुनि हैं जसहि तौ सुनि मूढ विवेक॥

कवित्त—कविन में कविवर उमापति धर नाम,
बालहू की खाल काढ़ि करत निहाल सो।
धोयी कविराज श्रुतिधर ह्वै विराज रह्यौ,
शारण तौ कूट कनि कूटत विहाल सो॥
सब रस सार हि सुगावत चढ़ावत ही,
रह नोक गोवर्धन साल सौ।.....

रचना कवि सुरी की चातुरी मति सुरी की,
जानै जयदेव ही रसलसौ विसाल सौ ॥१६॥

दोहा—मादक तें मादक सरस राधाकृष्ण बिहार।
सो जयदेव हि चढ़ि गयौ रही न तनक संभार॥
विन निकेत नहि सुख अहो नींव विना न निकेत।
त्यों ऐश्वर्य्य हि नींव में देत मधुर रस हेत॥१८॥

अष्टपदी

प्रलय समुद्र ते वेद आपुन काढि लए।
भयौ तनक नहि खेद नाव हि धरत भए॥
केशव तुम ही मीन जय जगदीश हरे॥१॥
तुमरो पीठ विशाल जा पर धरनि रहै।
धरनी धरन रसाल दृढ़ता कौंन कहै।
केशव तुमही कच्छ जय जगदीश हरे॥२॥
तुमरौ धवल सुदन्त आहि मयंक मनौ,
तापर धरा लसंत यही कलंक जनौ॥
केशव तुमहि वराह जय जगदीश हरे॥३॥
तव कर कमल रसाल पैंने नखनि ठए।
हिरण कशिपु विकराल भोरहिं झोर लए॥
केशव तुमहि नृसिंह जय जगदीश हरे॥४॥
अद्भुत वामन रूप वलि छलि दलि डग जु भरी।
पद नख नीर अनूप जन की शुद्धि करी॥
केशव तुमहि उपेन्द्र जय जगदीश हरे॥५॥
छत्रिय रुधिर प्रधान तुमनि तड़ाग करे।
तहां कराय सनान जन के पाप हरे॥
केशव तुम ही राम जय जगदीश हरे॥६॥
रावन के दश शीश रन में तुम हि हरे।
दशों दिशा को ईश तिन की भेट करे॥
केशव तुमही राम जय जगदीश हरे॥७॥

धारत विशद शरीर घन सम नील पटै।
हल हति यमुना नीर ताकी ज्योति अटै॥
केशव तुम ही राम जय जगदीश हरे॥८॥
पशु नाशक विधि यज्ञ तुम ही वेद हतौ।
हे दयालु सर्वज्ञ सचे मतें मतौ॥
केशव तुमही बुद्ध जय जगदीश हरे॥ ९॥
दुर्जय यवन अपार मारन हेत अहा।
धारत हौ तरवार जरती आग महा॥
केशव तुमही कल्कि जय जगदीश हरे॥ १०॥
श्री जयदेव उदार ताको कथन यही।
सुखद शुभद भवसार सुनिये रसिक सही॥
केशव तुम दशरूप जय जगदीश हरे॥ ११॥

स०—वेद उधारौ त्रिलोकी हू धारौ धरान उतारौ जू दांत चढ़ाई
दैत्य दल्यौ बलिहू कौं छल्यौ अरु छत्रिन मारि धरित्री फिराई॥
रावन जीत्यौ धरयौ हल हू करुणा हू करो हते म्लेच्छ कसाई।
आपुहि ये दश रूप अनूप सु तोहि को कृष्ण मैं नार नमाई॥१॥

दोहा—अभिमानी त्यागी तरुन कुशली धनी कुलीन।
भव्य छमा युत शुभग पुनि केलि कलानि प्रवीन॥ २॥
रति समर्थ सुन्दर वचन ये नायक गुन गाय।
ते सब कहैं सु कृष्ण में जाते नायक राय॥ ३॥

अष्टपदी

सेवत श्री कुच मंडल पहिरि ललित वनमाल।
जय जय देव हरे॥
दिन मणि मंडल मंडन जग खंडन मुनिजन मानस हंस।
जय जय देव हरे॥
कालिय अहिवर गंजन जन रंजन यदुकुल कमल दिनेश।
जय जय देव हरे॥

मधु मुर नरक विनाशन गरुड़ासन सुरकुल क्रीड़ा हेत।
जय जय देव हरे॥
अमल कमल दल लोचन भव मोचन त्रिभुवन भुवन निवास।
जय जय देव हरे॥
किये सिया वर भूषण जित दूषण समर हत्यौ दश शीश।
जय जय देव हरे॥
नव जलधर तुम सुन्दर धृत मंदर राधा वदन चकोर।
जय जय देव हरे॥
तुव पद पतित दयाल सु तजि आलस सु करौ कुशल विस्तार।
जय जय देव हरे॥
कवि जयदेव क गावत कालि भागत भक्तनि देत आनन्द।
जय जय देव हरे॥

स०—जहां राधिका संग अभंग अनगं ते खेद भरो पर स्वेद भयौ।
पुनि गाढ अलिगंन ते कुच केशर लागि गई जनु छायौ दयौ॥
मति आवत यौं अति भावत है हिय के अनुराग कौ राग छयौ।
यह छाती मुराती रजू सो अजूरहि पूरहि काम अकाम नयौ॥

दोहा—श्रोत हि वक्त हि कामना सुख में अंतर आहि।
श्री जयदेव सुरसिक वर यह कहि मेटी ताहि॥

शोभाछन्छ

रस परिपाटी जाने। कवि जयदेव वखाने॥
विप्रलंभ सुख रासी। प्रीति पुष्टि परकासी॥
चाह विना सुख कैसे। भूख विना अन्न जैसे॥
भूख नही दुख कारी। गरा दुखो होय भारी॥
विप्रलंभ विन नांही। चाइ होय प्रिय मांही॥
चाह मिलन में ठानें। अन मिलवोई मानें॥
नित्य वियोग है सोई। ताकौ जतन न कोई॥
विप्रलंभ सुख रासी। सदा रहै सह वासी॥

आये मिलत न जातै। मिलन जतन है तातैं॥
नित्य मिलन यौं जान्यौ। कवि जयदेव बखान्यौ॥

कवित्त—सिसिर रितु गिरी औ वहाली वहै ग्रीषम की
दुहुन की छाया छीण छयो सब लोग है॥
अपातन सपातन सुपांति विराजै तरु
सीतल न तातौ जल युगल प्रयोग है॥
भूखन अभूखन अपाचन सपाचन
अरोगन सरोगन अभोगन सभोग है॥
वयसंधि वारी है वसंत रितु अति प्यारी
जानैं किये नर नारी काम चारी योग है॥

स०—ऐसें वसंत में काम की पीर सों व्याकुल वीर अहीर की बेटी।
माधवी फूल ते कोमल पाय फिरै वन ही वन लाज लपेटी॥
ढूढत प्रान पियारे दुखारे कों चाह सगी उतसाह चपेटी।
ओठनि पापरि आ-परीयों यह ताहि कही इक बापुरी चेटी॥

अष्टपदी

ललित लोंग को लतानि लपटि करि, कोमल मलय समीरे।
मधुकर निकर मिले कोकिल सुर झंकृत कुंज कुटीरे॥
विहरत हरि सखि या रितु मांही।
नाचत युवतिन के संग राधे विरही कों सुख नाही॥
काम मनोरथ करि करि पथिक वधूजन करत विलापैं।
जुत अलि कुलनि कुसुम सुषमा सों सघन सुवकुल कलापैं।
मृगमद हूँ ते सरस सुगंधित नवदल युक्त तमालैं।
तरुनिन के मनछेदन मनसिज नख से किंसुक जालैं॥
मदन नृपति के कनक दंड जनु केसर कुसुम प्रकाशैं।
पाडर के झोरा झोरायत स्मर तरकस से भासैं॥
लज्जाहीन जननि जनु देखत हँसि करुणा तरु राजै।
विरही के चीरन कौं मानौ केतकि आरा साजैं।

वासंती की सुललित अति नव मालती सूधां ॥
मुनिजन हूं कें मन को मोहन जुवा अकारन बंधा।
फूली लता मोतिया सो मिल फूले चूत यहां हैं ॥
बृन्दावन धोयौ यमुना जल सब दिशि फैल प्रवाहैं।
श्री जयदेव कथन यह नीकौ हरिपद सुमिरन मारं ॥
सरस वसंत समय वन वरन्यौ अनुगत मदन विकारं।

दो०—कियौ धूम सौ काम की असवारी कों गान।
जाननि हारे जानि हैं जे रूपक सज्ञान ॥

सवैया

चलि फूलति-फूलति मल्लिकावेलि चहू दिशि फैलि है गंध घनी।
पुनि हेमकी केतकी सौ लपटी घृत सींची आग अभाग अनी ॥
लखि काम के प्राण समान महान वयार चलै दुख सार सनी।
विरहीनि कों जारै जरेन को छारै उछारै निहारै न धारै मनी ॥
अ हो कोकिल कूजत आँब के भौंरा पै गंध सों अंध ह्वै भोरा भवे।
विरहीनि के नैंन रु कान महान दुखो होंय ते तब मूदि लवे ॥
धरि ध्यान हिया में पिया सो मिलें वहु भोगी ह्वै योगी सा हाय फवे।
दिन टारन हेत हजारन बात बनाव-तऊ तन ताप तवे ॥ ३

दो०—वहु नारी परिरंभरत करत विलास मुरारि।
ताहि दिखावत राधिकहि सहचरि कहत उचारि ॥ ४

अष्टपदी

चन्दन चरच्यौ श्याम सुभगतन पीतवसन बनमाला।
गंड युगल मनि कुंडल मंडित हसत लसत सु-रसाला ॥
हरि इन मुग्ध वधुनि के मांही हे विलासिनी रास कराही ॥ध्रु
किन हू पीन पयोधर के पर हरि लपटाय लये है।
गावत पंचम के सुर आछें हरि पाछे सु दये है ॥
कोई श्री मधुसूदन कौ मुख कमल समान सु ध्यावे।
वहुविधि दुखमोचन लोचन सो काम हिये उपजावे ॥
कोइक सुंदरि सुन्दर के ढ़िग बात कहनि मिस आवै।

चूम कपोल अमोल अचानक फिर दुर जाय लजावै ॥
कोई हेत सुचेत कुंज ते गहि पिताम्बर पिया कौ ।
क्रीडा हित खेंचत यमुना प्रति जानत भाव जो हिय कौ ॥
कोईक संग नाचत हरि ताकी निज मुख करत बड़ाई ।
ताल देत चूरिन के विच जिन मुरली बजै दिखाई ॥
ईक सो लपटत चूमत एकहि एकहि जाय रमावैं ।
हँसि करि देखि रहे काहू को काहू के संग धावैं ॥
वरनी श्री जयदेव अलौकिक केशव केलि दुरी जो ।
श्रीवृन्दावन में तन के मन के मंगल निकर फुरी सो ॥

दो०—इन्दीवर से अँगनि करि ह्वै अनंग वस वाम ।
लपटी मनो शिंगार सों बिरहत संग घनश्याम ॥१॥
श्रीराधा के विरह सों तप जाड्य उद्वेग ।
आलस जुत-कहे कृष्ण के निपुन समझि हें वेग ॥ २ ॥

सो०—उर दिखवत सखि स्यानी । मिलन हेत कहि वानी ॥

सवैया

मलयाचल की सखि सीरी वयार साप अपारनि कौ यारकरी ।
तिंह दुखतें पाले में डूवन कों यह जात हिमाले कां रोस ररी ॥
सुनि और हू आम के मौंर लखें कल कूजत कोकिल मोद भरी ।
विरहीनि अँधेर पुकार कहै किलकार कुहू-कुहू साठ घरी ॥

इति श्रीगीतगोविन्दभाषायां रसजानि वैष्णवदासकृतायां
प्रथमसर्गः

शोभा छन्द

राधा लख्यौ त्रिमँगो । तियनि संग बहु रंगी ॥
निज घटती जिय आनी । महा ईरषा सानी ॥
तहां ते भई उदासी । चली हिये दुख रासी ॥
लता कुंज में आई । भौंरनि की धुनि छाई ॥
अपनी सखी सयानी । ताहि कही यह वानी ॥

अष्टपदी

निकसत अधर सुधा मधुरी धुनि वजत मोहनवंसी ।
चलत कटाछ हलत अलकावलि गंडनि दुति अवतंसी ॥
रास मांहि हरि किन्ह विलासहि, सुमिरत मन मम किय परिहांसहि ॥
शिखी शिखंड ललित चन्द्रावलि केसनि गुही सु सोहै ।
कारी भारी घटनि मांहि जनु इन्द्र धनुष मन मोहै ॥
सुन्दर गोपिन के मुख चूम्बन ता हित लोभित भारी ।
जपा कुसुम सम मधुर अधर अति हसत सुलसत मुरारी ॥
पुलकनि भुजवनी पियास को लपटी तिया सुप्यारी ।
उर कर चरण ललित मणि भूषण किरणनि की उजियारी ॥
चन्दन कौ बेंदा शिर मानौ घटनि माहि शशि राजै ।
पीन पयोधर मर्दन निर्दय हृदय कपाट विराजै ॥
मनिमय मकराकार मनोहर कुंडल गंडनि सोहे ।
मुनिजन मनुज सुरासुर रीझत पीतवसन मन मोहे ॥
विसद कदंव तरे सु रहे लगि प्रणय कलह भय मेटे ।
काम सने मन फेनिलसो सखि मोही कों कछु भेटे ॥
श्री जयदेव कहौ यह सुन्दर मोहन मधुरिपु रूपै ।
कृष्ण चरन सुमिरन करिवे कों है भक्तनि अनुरूपै ॥

चौ०—रस सिंगार मांहि रति थाई । संचारी गुन गान सदाई ।
सो यामे वरन्यो सुखकारो । मनके वस परिगई सुप्यारी ॥

सवैया

मन मेरो तो चेरो भयौ पिय कौ निस द्योस गने गुन कों विधनी की ।
अलि औगुन की दिसि देखे न मूलहू फूल मोठो सही शूल सही की ॥
पुन खीजियती जिसों रीझि रह्यो नहि खीजत भोरेहूं देखो वनी की ।
सखि मो विन रास करै जु उमाहत एते पै चाहत ताहि अलीकी ॥

दो०—कहा करो सखि मोर मन मोसे भयौ उदास ।
हे अलि मोहि जिवाय अब इक तेरो ही आस ॥

अष्टपदी

एकान्त कुंज गृह पैठों। ते निसि में दूरि रहै।
चकित विलोकों सकल दिशा में ते रति हित हसि जैहैं॥
सखि हे केसी मथन हि ऐसै॥ ध्रु०॥
मो संग रमन करावहु सादर तेहु दुखी मै जैसै॥
प्रथम समागम सो मैं लज्जीत ते प्रिय बचननि बोलैं।
मैं मृदु मधुर हसति वतराबकुं ते हसि नीवी खोलें॥
किसलय सेज मोहि बैठावैं आपु उर लपटि रस लूटैं।
मैं परि रंभन करि घुमौ ते लपटि अधर रस घूटैं॥
आलस सों मैं मूदि रहो दृग ललित भांति ते पुलकैं।
मैं श्रमजल सो सजल हो हुँ सब ते सु मदन मद कुलकैं॥
मैं कोकिल ज्यौं कलरब कूजी ते पटु कोक कला में।
सिथिल कुसुम युत कुन्तल मेरे ते नवांक कुच का मैं॥
चरण रणित मणिनूपुर मेरे रति वितान ते तानें।
कांचो टूट दोहि मोहि ते कच गहि चूंबन दानें॥
रति सुखकरि आलस पैहों पिय के नयन विकासे।
मैं तो धीरज तजि गिरिजैहो ते पुनि मदन प्रकासे॥
श्रीजयदेव भणित यह नीकौ गोप बधू करि गायौ।
श्रोतहि वक्तहि सुख विस्तारौ हरिक्रीड़ा करि छायौ॥

चौ०—चाह सनी पुनि वतिया कहीं। जहां रास मोहि लै चलि तहीं।
रास करत में लखि हों जब हीं। हे अलि आनन्द पै हों तब ही॥

क०—यमुना के तीर धीर मलय समीर जहां
रच्यौ बलिवीर वीर रास ही बनायकै।
गोपिन के संग सो अनंग की उमंग छयो
कानन में तानन कौ रंग घमडाय कै॥
एरी चलि तेरी अलि चेरी वलि मेरी सोंह
तोहि मोहि देखत हो रहि हैं लजाय कै।

वंसी गिरि जैहै कांपि पसीननि छैहै दोठि
सब ते उठै है हँस दैहे खिस पायके ॥

स०—यह कैसो अशोक विकाश भयो जाके ओरनि देखे ही शोक प्रकाशै
सरसी सर बागनि के तट को यह पौनहु कोंन जो ज्योति विनाशै।
धन गोधन के पर आं क्रीडा रस मौरी अपार है मार मवासै
वनिन के पर भोर भव भंकारत मारत तेन विचारत ऐसै ॥४॥

शोभा छन्द

यहि हेतु या माहीं। ढील उचित है नाहीं ॥३॥
इति श्री गीतगोविन्दभाषायां द्वितोयसर्गः ॥

दो०— प्रेम साँकरनि बँधि रही श्रीवृषभानु कुमारि।
हरि हू सब तिय तजि दई ताहा का हिय धारि ॥
विकल राधिका विरह सों दिन काटन हित रास।
कियो कृष्ण विपरीत सों भए-भए सु उदास ॥
छिदयो काम के शरनि हिय ढूंढ़ि जहाँ तहाँ आप।
कालिन्दी तट कुंज में बैठि कियौ अनुताप ॥ ३ ॥

अष्टपदी

मोहि देखि अनेक वधुनि संग राधा ऊठि गई।
सापराधी मैं जो राधा जात नाहिन गहि लई ॥
हाय आदर किये विन ते कुपित सी गमनी ॥ ध्र० ॥
कहा करि हे कहा कहिये भयो विरह अछेह।
कहा धन करि कहा जन करि कहा मम सुख गेह ॥
लखत ताके अरुन दृग में चढ़ो भोंह रिसाय।
लाल कमलनि पर मनौ रहे भोंर ही थहराय ॥
रात दयौस आनन्द भरि हिय माहि ताहि रमाऊं।
फिरो वन वन तास के संग वृथा क्यों विलखाऊं।
हा प्रिये यह ईरषा सो दुखित हिय बहु तोर।
जानत न मैं कित गई तुम सो लेहु तोहि निहोर ॥

देत दरसन दृगनि आगै जात आवत मोहि।
पहल ज्यौं लपट्यौ न क्यौ सूब कहां संभ्रम तोहि॥
छमा कीजे अब सु राधे अलक कोरि को फेर।
देहु सुन्दरि दरश मोको लियो मन्मथ घेर॥
कहो श्री जयदेव कवि यह कृष्ण को विलपान।
किन्दुविल्व समुद्र ते भयो प्रगट हिमकर जान॥

सो०—काम सतावे भारी। तासु कहै मुरारी॥

क०—होय न भुजंग अंग जारत विरह वीर,
धारत शरीर नेकु भिसनि के हार रे।
नील कंज दलनि की दुति सोहै नीलकंठ,
नीलकंठ होय क्यों न करत विचार रे।
होय न भभूत या अभूत योगिया के देह,
खेय भयौ ताप तचि चन्दन तगार रे।
मैं तौ हों वियोगी सुन अरे मार फुलशर,
हर के भरोसें मरे हरि को न मार रे॥

सोभा—तिय हो काम सहाई। तिय विन काम है राई।
ऐसे जानि मुरारी। वरनत है सुखकारी॥

क०—भौंहे धनु सोहे ये कटाक्ष शर मोहे पुन,
नैननिके कोर जोर जेह दरसात है।
काम जय कारी वृषभानु की कुमारी येतो,
ताके हथियार पाय मार मरि जात है॥
जितनी त्रिलोकी तिन नीकी विध भोंकी कोऊ,
वच्यौ न अलोकी कोक कोकी विलपात है।
मदन मद न रह्यो कदन हद न पायो,
प्यारी कौ पदन गह्यो सदन रहात है॥ ४॥
अरे सुनि काम मृगनेनी अभिराम मेरो,
ताकि दृग वाननि की मारनि सो छियौ मन।

विकल अधीर वीर अब लों न धरें धीर,
तेरौ जस भूरि कूर देखियै न ताके तन ॥
ते तौ करि खेल ही सौ जीत जग कीनौ वस,
मृतकनि मारिवेमें कहौ कौन कहावन ।
नृप शिर मौर शिर आमनि के मौर धरि,
चापन चढ़ावत यौ तापनि विलायै जन ॥ ७ ॥

सोभा०—ध्यान माहि तिय आई । यह पिय ताहि सुनाई ॥

कवित्त—भौंह धनु तानि तने तेरे ये कटाक्ष वान
वेधत है प्राण जानि वानि इनकी परी ॥
कुटिल करोही जाहि कीनी है पिछोही यह
वेनी रहि सोही मार कोही करिवा करी ॥
अधर सुरागी वड़ भागी येक दूरी सम
पुरी मन मोहक तासों ऊन हिये धरी ॥
तेरौ कुच मंडल है सरस कमंडल सो
मेरौ जिय तंदुल सौ करत सु क्यों अरी ॥ ८ ॥

शोभा—दुखी भये पिय भारी । तब यह मनहिं उचारी ॥

स०—निसि वासर ध्यान में डूव्यौ रहौं सुख पाय प्रिया परिरंभ महा ।
पुनि आछें कें विलोक्य करों स्वरुप सदा मुख सौरभ सूँघों महा ।
भलें पीवो करों अधरामृत कों वचनामृत की कहिये सु कहा ।
यह कैसो वियोग मिटे न अजी कहि कहि भजों बुरे नेह नहा ॥

इति श्रीगीतगोविन्दभाषायां वैष्णवदासरसजानीकृतायां
॥ तृतीय सर्ग : ॥

दोहा—वेतसी कुंज में यमुन तट विरह विकल नंदलाल ।
तिन सा राधा की सखी बोली वचन रसाल ॥

अष्टपदी

निन्दति चन्दन चन्द किरन लखि व्है अधीर दुख पावै ।
मलय समीर मिल्यौ पाटीरहि गरल समान सतावै ॥

राधा विरह सताई।
काम वान भय ते मानौ हरि तोर समाधि लगाई॥ ध्रु०॥
मदन कदन हित शरनि चलावत तुम हिय रहत सदाई।
तव रक्षा हित लै नलिनीदल कवच करत उर मांई॥
केलि कला कल कुसुम सेज जो स्मर शर सेज है ताकौ।
ब्रत सौ करत तवालिंगन की है उत्कण्ठा जाकौ॥
सुन्दर मुख जल श्रवत विलोचन सनि कज्जलहिं रह्यो है।
राहु दन्त करि दलित चन्दते जनु यह अमृत वह्यौ है॥
मदन रूप तुम ताहि वनावै रहसि वैठि मृगमद सौं।
कर धरि आंब मोर रूपी शर तिमि विछाय तरपद सों॥
पुनि पुनि नवत ध्यान धरि तेरौ देखत तोहि दुरापै।
विलपति रोवति हसति विषीदति ऊठि चलि तर्जति सुतापै॥
वारवार यह कहत हे माधव तुव पद मांहि परी हौं।
तुमते विमुख भये हे प्यारे हिमकर किरन जरी हौं॥
श्री जयदेव भणित यह नीकौ जो मन चहे न चायौ।
तौ हरि विरह विकल राधा सखि कौ पढ़ि वचन सुनायौ॥२॥

कवित्त—वचन दुसह भये हसनि रस न होत,
स्वासनि ते जागी है वियोग आगि आगरी।
धाम तो उजार सो है छार सो है कामकाज,
आलिन के जूथ जाल एसे हाल नागरी॥
भोजन हलाहल सो कुलाहल नाद जाहि
वाद है कि वाद से विषादनि की सागरी।
आपुन मृगी के तूल कामदेव शारदूल,
वचि है न मूल शूल उठि है उजागरी॥३॥

अस्टपदी

हारहु कौ नहि भार सहारै। नील कुसतनी प्रान हि धारै।
राधिका वछुरें तोहि केशव॥ध्रु०॥
सरस पटीर शरीर लगाव। विष सो ताहि लगै तन ताप॥

बड़े बड़े स्वासनि भरति सदा है। अगिन समान तनहि सो दाहै॥ रोवति दिशि दिशि दृगनि पसार। सजल कमल की छविहि निवार लगत अगिनि सी किसलय सज्जा। विलपति निस बासर तजि लज्जा कर कपोल धरि शोचति वाला। जनु शशि पौढ़ो कमल रसाला॥ विरह विकल मरियो मन धारै। हरि हरि जपति न तोहि विसारै श्री जयदेव गीत यह गायौ। सुखी करहु केशव पद पायौ॥४॥

कवित्त—तेरी सुधि आए तन पुलकित होत प्यारे,
नितिही सिस्यात चित चिंता तेरी ये धरी।
तोही को विलापै तापै विरह महान काँपै,
पावत हू दुख तोहि ध्यावत सदा हरी॥
भटक्योंइ करै नेंन मूदि गिरि परै पुनि
फेर उठि धावै पावै मूरछा घरो घरी।
आप सद वैदथ खेद काम जुर कौ है ताहि
तेरे रस जोहैं तीहै मारिन मरी परो॥५॥

दो०—काम विकल अंग संग तें जो है नन्दकिशोर।
राधा की बाधा न जौ मेटहु तौ सु कठोर॥

क०—काम जुर जारत महा आतुरता धार तन,
एहो सुख रासि अचिरज को प्रकाश है।
चंदन को नाम लियें भाम विन मारि मरै,
चन्द के कहे ते होत आनन्द विनाश है॥
कमल कथा को सुनि विथति विथानि वीर,
पीर का कहाँ चली शरीर पै न मांस है।
सीतल महान तुम ताको नित धरै ध्यान,
स्वासनिते प्रान-पति प्राणनि को आश है॥

दो०—पहिले पलकनि कौ विरह सहि न सकै वह भाम।
अब रसाल मौरे सुसखि क्यों जी हैं घनश्याम॥८॥

इति श्री गीतगोविन्दभाषायां वैष्णवदासरसजानीकृतायां
चतुर्थसर्गः

शोभाछन्द

तब बोले वनमाली। दया करी जे आली ॥ १ ॥
राधा की सुधि दीनी। जीव दया तें लीनी ॥ २ ॥
मैं चलि सकत सुनाही। बसौं इही गृह माही ॥ ३ ॥
आपु राधा कौ ल्यावो। विनती वचन सुनावो ॥ ४ ॥
अलि सांची लखि आई। राधा बात सुनाई ॥ ५ ॥

अष्टपदी

चलत मलय समीर मदन कौ गहि हाथ।
कुसुम विकसति दलन विरहि अनाथ ॥
तुव बिछुरे वनमाली सखि सीदति ॥ ध्रु० ॥
दहति शशि सखि तँह मूरछित सौ होय।
हतत मदन सुवाहि विकल विलपत सोय ॥
मधुप धुनि अवगाह रहत मूदि सुकान।
रात में अतिदाह विरह दावत आन ॥
बसत विपिन मझार तजे ललित सुधाम।
लुठत धरनि मुरारी जपत तेरे नाम ॥
भनत कवि जयदेव विरहि कृष्ण विलास।
ऊवो मन हरदेव सकल सुख की रास ॥ ६ ॥

कवित्त

पहले तिहारे संग जहां भरि रंग राधे,
कीनी कल कामकेलि केशव कुंवर सद।
ताहि काम तीरथसी कुंजरस पुंज मांहि,
करत प्रयोग ताहि आप रीझि हो ' सुकद ॥
निसि दिन तेरो ध्यान धारे न विचारे आन,
तेरी वतरान मंत्र जपत है जब तव।
सो तो है उपासक उपास्य तूं विराजत है,
सरस उपासना कौ दीजै फल देवि अब ॥७॥

अष्टपदी

रति सुख सार कुंज अभिसार सु तहां मदन मनमोहन।
न करि विलंव तितंविनि राधे चल प्रीतम ढ़िग सोहन॥
धीर समीरे यमुनातीरे वसत अये वनमाली॥ध्रु०॥
कर संकेत नाम ले तेरे मुरली मधुर वजावत।
तुव तन परसि पवन रज आवत ताहू ऊठि लपटावत॥
कुंज मांहि पातनि के खटके चौंकत जनु तिय आई।
रचत सेज पुनि चकित विलोकत तब मारग सुखदाई॥
तजि मंजीर केलिके वैरी चल वृषभानु कुमारी।
कुंज मांहि तम पुंज छयो सखि पहिरि नीलपट सारी॥
सोहत हार मुरारि उर स्थल जनु घन में बकमाला।
रति विपरीत समय विजुरी ज्यों नीहांआपु रहो रसाला॥
तजि अतरौटा रसना वलि युत किसलय सयन विराजौ।
कमल नैन ढिग मोद भरीसी निधि रूपा अपु राजौ॥
हरि अभिमानो निसि सुखदानी वीतत जात अलीरी।
पूरन करो कृष्ण को कामे मेरी वात भलीरी॥
श्री हरिदेव सेव पारायन कवि जयदेव सुगायौ।
प्रमुदित हृदय सदय माधव को नबहु सुकृत फल पायौ॥८॥

कवित्त—एहां सुखरासि दुखरासि में समानौं पिय,
स्वासहि निकासि देखै रहयौ है कि नाहिने।
वोले हूं कहै न वाक ताकि निज नाक अनी,
रहत निहारत ही जानौरी जराहने।
सेज हि वनावत कुकावत कहां हो प्रिये,
खट को भएते दोर धावत उबाहने।
देखत दिशा दशो न एक कौन कौन ध्यान,
आश भए हानि प्रान कठिन निवाहने॥९॥

सोभा०—सांझ देखि कहि अलि है। अव अपु ही तू चलि है॥१०॥
काम सतावन आयो। सुनि राधे मन भायो॥११॥

स०—तेरी हंसाई के संग अहो यह पेखि पछांह कों सूर सिधायौ मोहन के मन माने ते कामका काम कौ देखि अंध्यारौ हु छायौ, कोकनि के सम शोक सन्यौ सु सुन्यौ सखि ने कछु मेरौ हु गायौ कीजे अवारन चालौ सवार यही अभिसार कौ वार सुहायौ ॥१२॥

शोभाछन्द

ऊवै चन्द चलौ जू। तह अलि कही सुनौ जू ॥१३॥

कवित्त—औरै काज जैये मिल जैये मन भांवने कों,
जब' बतरैये तब जाने सुपिरीति है।
पुनि लपटैये अधरामृत पिवैये फिर,
छातिन लगैये ओ जगैये कामरति है।
कैसें छिटकैये मिले कुंज गहि सिधैये,
केलि समुचैये औ अघैये न टरति है।
निसि अंधियारी भारी प्यारी सुभकारी वीर
कैसें कैसें कैसें रस यामें निकरति है ॥१४॥

सो०—ताकी तोहि कहा है। कहि सखि तूं जो चाहै ॥१५॥
सो तोहि देहु सयानी। तब बोली यह वानी ॥१६॥

स०—मग मांहि अंधेरहि हेरत आप चलो वलि भीति सनी सुचकीसी तरु ही तरु के तर ठाढ़ो सुहोत भरौ पद मंदहि मंद अकीसी। पुनि कैसेहु कैसे निकुंज में जाय रहो अगं अंग अनंग छकीसी अहो तोहि निहारि मुरारि कृतारथ होहु यथारथ ता पथकीसी ॥

इति श्री गीतगोबिन्दभाषायां वैष्णवदासरसजानी
कृतायां पंचम सर्ग :

सो०—तब बोली हे आली। जहां विकल वनमाली ॥१॥
खाट डारि मोहि तापै। लै चलि रुचै जु आपै ॥२॥
पुनि अलि दुख में भोई। कंठ खोलि पुनि रोई ॥३॥
पोछत आखिन आई। गद्गद हरि हि सुनाई ॥४॥

Govind Kund ★ Vrindavan, Mathura ★ Das

अष्टपदी

दिसा दिसा मै तोहि निहारै। अधर मधुर मधु पिवत विचारै॥
नाथ हरि व्याकुल राधा विरह महा ॥ध्रु०॥
साहस वांधि सुचलै मुरारी। पै डग डगयै डिगत विचारी॥
कर मृणाल के वलय वनावै। ताहि तनक तेरी रति ज्यावै॥
तेरेई सिंगार सिंगारै। मैं माधव या भावहि धारै॥
पुन पुन यहो कहै वनमाली। पिय को ढ़ील लगी क्यों आली॥
तो को जानि कुंज अंधियारै। फिर फिर मिलि चुंबन विस्तारे॥
तो को ढोल भए तजि लज्जा। विलपति रोवति वासक सज्जा॥
श्री जयदेव कथन यह प्यारो। रसिक जनन कों सुख विस्तारो॥५॥

सो०—सुनि बोले नन्दलाल। सोयो विरह विहाल॥६॥
तो जीवति है कैसे। सखी कही सुनि ऐसे॥७॥

कवित्त—कवहुँ समाधि मांहि आधिको मिटाय देत,
तोहि लपटाय तन छाय जात पुलकान।
कभू अधरामृत को पान में सुजान कान्ह,
जड ह्वै जड्यात सिसियात धरें विलपान।
कबहु कि केलि कल कोक की कलानि करै,
लिये झेझकान अधरान भोंहे तान तान।
आप अति छली भली कोमल कली सी राधा,
वाधा है अगाधा पर तेरो धरि रही ध्यान॥८॥

शोभाछन्द

सुनि के कही मुरारी। वातन दै निसि कारी॥९॥
प्रात चलेगें आली। सखि कही सुनि वनमाली॥१०॥
कवित्त—अहे पिय धारि हिय करत सिंगार सारे,
आपु कहा प्यारे कहै पान खटकान मै।
सेज ही संवारै सब सोज ढिग धारै व्याधि,
मेटन समाधि साधि डूबत कथान मै।

या विधि सिंगारनि में मन के विचारन में,
सेज की सवारन में धारन हूं ध्यान मै।
नीके लगि रही पगि रही पर वात यही,
रातन वितैहैं मरि जैहै विन जान में ॥११॥

इति श्री गीत गोविन्द भाषायां वैष्णवदासरसजानी कृतायां षष्ठ सर्ग :

सवैया

ताहि समें शशि की भौ ऊदो नभोन में कोंन में राख्यौ अंध्यारौ
पूरव ही दिशि नायका के मुख सोहत चन्दन वेंदा सौ भारौ।
ताके सुअंक कलंक वसै कहि देत है हेत न नेमि उचारौ॥
नाश करी कुलटानि की राह कौ चंद सौ पापी में पाप है कारौ।

शोभाछन्द

शशि हू उदो सों पायो। तऊ न माधव आयौ ॥२॥
तब राधा विकलानी। तपति सहित विलपानी ॥३॥

अष्टपदी

कही हू समथ में पिय न वन आईयौ।
अफल यह अमल मम रूप वय जाईयौ॥
जाहु मैं सरन काकी सखी जन वचन बंचीता ॥ध्रु०॥
सहित सब निशा वसी बनमाह मै।
जरति हौ कामकरि रही हू छांह में॥
व्यर्थ यह देह अब त्यागि हों प्रान हो।
क्यों सहों विरह की आग अज्ञान हो॥
हाय दुखवत मोहि मधुर मधुयामिनी।
रमत सों कहूं जहां सुकृत कृत कामिनी॥
हाय मणि भूषननि मोहि जारी महा।
कृष्ण के विरह को आग कहिये कहा॥
कुसुम सुकुमार तन हतत है काम ज्यौं।
विषम व्है हिय कौ हार हू जियो क्यौं॥

त्यागि भय 'वसति मैं वेतसी कुंज मे।
खटकत न तनक पिय हिये सुख पुंज में॥
हरिचरन सरन जयदेव कवि काव्य यों।
वसौ हिये केलि कला कलावित युवति ज्यों॥

सो०—पुनि पिय प्रेम विचारयो। तब यो बचन उचारयो॥ ५॥

क०—दामिनी सो कामिनी के कामवस भये किधों,
मीतनि के संग दाव जीतन को धरी मन।
कैधौं घनश्याम अभिराम सुखधाम प्यारौ,
आवत हमारे पास पावत न राह बन।
कैधौं मम विरह सतायौ अकुलायौ महा,
चित्त हू चलायौ चलि सकत न नेकु पन।
हाय कहा बात जाते जात अधि रात हू न,
आये सुख पुंज कंज कैसी बनिताके तन॥ ६॥

सो०—तबही आई आली। संग नहीं बनमाली॥ ७॥
मौन धरै दुख छायौ। तब राधा मन आयौ॥ ८॥
हरि सु कहूं रति ठानी। पुनि बोली यह बानी॥ ९॥

अष्टपदी—

केलि उचित जिन वेस बनाय। वरषत कुसुम केश छवि छाय॥
कोई अवर तिया विलसति युवति चतुर हिया॥ ध्रु०॥
लपटि पिय हिं भये रोम रसाला। कुच कलशनि पर तरलित माला॥
हलति अलक मुख ललित सुचन्दा। पीवत अधर आलस अमन्दा॥
सोहत कुंडल ललित कपोलै। वाजत रसना लटकत डोलै॥
पियहि विलोकति हसति लजावै। केलि समय वहु कूक मचावै॥
विपुल पुलक तन कांपत भारी। जगत अनगं हु सासति नारी॥
श्रमजल कन करि ललित शरीरा। लोटति हरि उर रति रणधीरा॥
यह विलास जयदेव सुगायौ। जन कौ जिन कलि कलुष मिटायौ॥१०॥

दो०—जिती अवस्था कही ये ते सब राधा तीय।
पूरव अपु अनुभव करी वह झल की अब हीय ॥ ११ ॥
सो०-पुनि पिय प्रेम विचारथो। तब यह वचन उचारथौ ॥ १२ ॥
छ०—विरह पंडु मुरारि मुख सौ चन्द देत अनन्द को।
यही धरि हिय मो बिनाहूं होत दुख सुखकन्द कों ॥
काम के यह सुहृद शशि सखि कामव्यथा अमन्दकों।
कहत है हिय जरत मेरो सुमिरते नन्दनन्दकों ॥ १३ ॥

शोभा छन्द

पुनि बोलो श्रीराधा। विकल मदन तन बाधा ॥ १४ ॥
दुखी क्यों न पिय आयौ। तब हिय मे यौ ध्यायौ ॥ १५ ॥

अष्टपदी

मुख सुखसारे मन बिहारे क्षत अधर पुटा धरे।
मृगमद तिलकै करत सु पुलकै मृग सम सु निशाकरे ॥
विहरत यमुना पुलिनवने चतुर मुरारि अब हो ॥ ध्रु० ॥
घन रुचि ढ़ारें तरुन निहारे स्मर मृगवन राज हीं।
चपला की सम कुसुम अरुणतम तहां रचि मुद साज हीं ॥
सघन युगल कुच नख अंकनि रूच मृगमद रचि राख हीं।
मोतिन हार तापर धारे मृदु वचननि भाख हीं ॥
निशि शोभा की भुज युग ताकी कर दल सम सोह ई।
तहां वलयावलि जनु भृमरावलि रचयित मन मोह इ ॥
जघन सुरति घर विपुल कठिनतर स्मर सुवरन पीठ से।
मणि रसनारो तोरन वारी तहां विरचित ढोढ से ॥
पद किसलय से रमा निलय से नख मनि गण सोहने।
हरि तोहि हिय धरि यावक रस करि रचयत मन मोहने ॥
तिय मृग नेंनो अति सुख देंनी खल रमई जानि कै।
इह बन हे अलि बहुदिन बिन फल हम वसति सुआनि कै ॥
यह रस गायौ हरि गुन छायौ कवि नृप जयदेव नें।
कलियुग कृत जो दुरित दुरित सो दिन प्रति इह सेवनें ॥ ३ ॥

सो०—मौन गहे सखि ठाढी । देखि दया ताहि बाढ़ी ।
पुन श्री राधारानी । पिय की सुननि कहानी ॥
सखि को बात सुनाई । ज्यों कछु कह सुहाई ।

कवित्त

सौ तो अति निरदई दया न करी दीननि,
दीनानाथ नाम ही सुनामरु धराय है ।
शठ हू है भारी इच्छा चारी बहु प्यारी संग,
हठ कौ हठिलो कठ पुतरी के भाय है ॥
तू न दुख पाव ताकी बात न चलाव आव,
ताकौ दुरभाग अहो सदा कौ सुभाय है ।
ढ़ेखि गुन बध्यौ यह मेरो चित फादि ऊत,
आप ही मिलाय हित वार वार जाय है ॥ २ ॥

सो०—रह्यो पिय हिय जातै । पुनि ताहो की बातैं ।
कहन लगी सुनि आली । जे बतियां बनमाली ॥ ३ ॥

अष्टपदी

पिय द्रग कमल ललित शोभा सो ।
सो न तपाति किसलय सज्जासों ॥
सखि जो रमई बनमाली ॥ ध्रु० ॥
पिय मुख ललित कमल छवि धारी ।
काम शरनिनें सोन बिदारी ॥
अमृत मधुर पिय बचन सुनावै ।
मलयज पवन तन हि जरावै ॥
पिय कर पद गुलाब छवि धारै ।
हिमकर किरन न ताहि पछारै ॥
सजल जलद सम आहि मुरारी ।
ताहिन दलै विरह भर भारी ॥
पिय पटलीक कसौटी जानौ ।
स्वासति सोन हँसी कोऊ ठानौ ॥

सकल तरुन वर पिय छवि छावैं।
दैत्य रोग नहि तहि सतावै॥
श्री जयदेव गीत यह गावै।
याहो करि हिरदय आवैं॥४॥

चौपाई

इतनें सीतल व्यार सु आई। तजि अलिकों ताहि बात सुनाई॥

सवैया

रे मलयाचल पोंन तूं कोन कौ प्रान नहीं विन प्रान परी हों।
कामकौ तूं सुखदाइ है काम कौ बामता त्याग अभाग भरी हों॥
हू जें प्रसन्न प्रछन्न न हौ जिन मे बर बीर वियोग वरी हों।
ल्याय कें नेकु देखायके प्यारे कों प्रान हत्यारे को काढि खरी हों॥२॥

शोभाछन्द

पुनि पिया की सुधि आइ। तब यो प्रलपि सुनाई॥
ता मे धुनि यह पैये। ज्यों होय त्योंव मिलैये॥

क०—प्रानन तें प्यारी सखी भारी भई वैरिन तें
सीतल समीर आग जारत शरीर है॥
आनन्द अमन्द चन्द कन्द भयौ विषकौ सो
फूल भये शूल तन धरत न धीर है॥
जबते मुरारि मेरे हिये के मझार आय
दई हैं दिखाई छाई तब ही ते पीर है॥
तऊ मन मोर चहै निर्दय कठौर ही को।
तीको कामनारों है हत्यारौ कारौ वीर है॥

सो०—सुनि अलि बोली नाही। तब डुबी दुख मांही॥
यह बोली पुनि मानो। तजि है प्राननि जानो॥

स०—चलरे मलयाचल व्यार अपार सताये ले मोहि न पाय है दूजै।
पुनि कामरे काम लौ बान सुतान निकासि ले प्राण अजान न हूजै॥

हे यमुना यमकी भगिनी यह तेरी छमा कों रमा नहि पूजै।
कीजै मया दीजे वोरि तरंगनि अगंनि आग अनंग की भूजै॥

इति श्रीगीतगोदिन्दभाषायां वैष्णवदास कृतायां।

सप्तम सर्गः।

सो०—निठ निठ निसि वीती। स्मर शर व्याकुल कीती।
प्रात भये पिय आए। विनती वचन सुनाए॥
चरननि में शिर राख्यौ। ताहि क्रोध भरि भाख्यौ।
पिय विन मरन छविली। पै रति जात रसीली॥

अष्टपदी

निशि वहु जागि लाल द्रग लालन जलकत आलस जाते।
ताही के अनुराग रंगे ये कहे देत सव वाते॥
हरि हरि जाहु माधव जाहु केशव मो ढिग कपट न भाखौ।
तहो पधारौ कमल नेन पिय जाहि हियें धरि राखौ॥
कज्जल मलिन तिया के लोचन चुम्वन कीने भारे।
ताते अरुन अधर ये प्यारे निज तनु सम विस्तारे॥
काम युद्ध मे पर नख रेखनि सनि सोहत वपु ऐसें।
नल रतन की शिला ललित पर कनक अंक होय जैसें॥
रति विपरीत चरन तें च्वै कर जावक रंग रसाला।
तुव मन मोहि मदन द्रुम ताकी लसत नवल दल माला॥
अव हूँ हे हरे यह वपु तेरौ मोते भेद हि मानें।
लखि तुव अधरनि में क्षतवहु दुख मो मन मे ठानें॥
अहो कृष्ण यह मन हूं तुम्हरो है तुम हीं सु कारौ।
न तो कामशर दुखी दान जान अनुगत ताहिन मारौ॥
बन वन विचरत तियनि गरासनि ह्यां अरिज ककु नांहो।
जन्मतही ते तियनि ग्रासिवौ कहत बकी व्रज मांहो॥
श्री जयदेव कहो यह नीकी तिय खंडिता वानी।
स्वर्ग सुधा हू ते मधुरीतर सुनो रसिक रससानी॥१॥

स०—हे कपटी तुव छाती सुराति प्रियापद यावक के रस सों।
अन्तर राग हि जागि परयौ यह पाप फरयौ समयें वस सों॥
मोते प्रसिद्ध सनेह हु तोसु तो नाश भयो यह बुरे जस सों।
तेरो वियोग कौ दुख महा करि हो कहां काम परयौ वस सो॥२॥

चो०यह कहि रोकि लयो सुबोल को। नेंन मूदि करि धरि कपोल कों॥

इति श्रीगीतगोविन्दभाषायांवैष्णवदास रस जानी कृतायां अष्टम सर्ग:

सो०—तब दुरि गए मुरारी। देखि विकल भई प्यारी॥
पिय हि मिलन नहि पाई। वहु विषाद करि छाई॥
पुनि-पुनि हरि कू ते ध्यायौ। अलि यह ताहि सुनायौ॥

अष्टपदी

पिय आवे मृदु चलन पवन के। याते सुख कहा अधिक भवन के॥
श्याम सो मत करि मानिनि मान बुरौ॥ ध्रु०॥
ताल फलनि तें गुरुता धरैं। सो कुच कलश विपल क्यों करैं॥
कै देर यह न कह्यौ तोहि आली। त्यागे मत सुन्दर वनमाली॥
विकल होय क्यौं रोय बिलापै। युवति विपक्षा हसति सु आपै॥
सजल कमल दल रची सेज है। पिय लखि कीजे सफल नेंन है॥
क्यों मन माँहि खेद वड धारै। सुनि मम वचन जु भे विरहद निवारै॥
मधुर बोलि तुव ढ़िग पिय आवौ। हे अलि मत अति हिय हि सतावौ॥
श्री जयदेव रचित यह गावौ। रसिक जननि को सुख उपजावौ॥

शो०—अब हू लरजी नाहीं। तब अलि भरि रिस माहीं॥
भों हे चढ़ाय कही यौं। तू न दुःख पावै क्यौं॥ २॥

क०—वह तो सरल साधु काठ ते कठिन तुम
वह शिर नावै लरजावै तु न तन कौ।
वह अनुराग भरयौ धरयौ तैं विराग महा
कहो गीत विपरीत तेरे सदा मन कौ॥
वह सदा श्याम है चितौन तेरी नाम है न
राम है न जान्यौ ते सुकाम हे न जान कौं।

लेखे तोहि विष सो पटीर आग सो समीर
होय शशि सूर मुख पूर दुख गन कौ ॥
इति श्रीगीत गोविन्द भाषायां वैष्णवदास कृतायां नवमसर्गः ॥

सवैया

रस रोष भरी दुख ते मुखते बहु स्वास चले जिय आश भगी ।
पुनि छाई उदासो हवासी गई अलि के दिशि देखत लाज पगी ।
तव नेन की सेनहि में कहि वैन बुलाय लये हरि चाह खगी ।
अहो आप सोऊ करि जोरि निहोरत वोनन में हित की सी लगी ॥

अष्टपदी

कछू हू वदन तें वचन भाषो प्रिये तव ,
दंत दुति भय मिटावै ।
यह सुमुखचन्द अधरामृत अमंद ,
हित रुचिर दृग चकोर हि वढ़ावै ॥
प्रिये चारु शीले छोड़ि ,
विनु काम या मानै ।
भगन सो काम की अगिन जारत हियो ,
जाय बुझि देहु मुख कमल पानै ॥
सांच ही कोप जो कियों कमिनि कभूं ,
तौ सुखर नख शरनि मारौ
होय सुख ज्यों तुम्हें करौ वांधौ ,
भुजनि देह को रदननि विदारौ ॥
तुही जीवन मोर तुही भूषण कौरि ,
तुही इक रत्न जग माही ।
अब सु यह कीजिये धरि हिये लीजिये ,
त्यागिये फेर प्रिय नांही ॥
नलिन नीले जनौ प्रिय तव नेंन युग ,
ते अहन कमल से कीनें ।

श्याम हम हूँ महा रंगो निज राग करि,
उचित करि कर्म जे लीने॥
चरण भूषण मनौ मदन विष नाशनौ,
धरौ मम शीश दे राधा।
मदन दुख सुर है देत दुख पूर है,
दूर करि तास की बाधा॥
पहिरि सुकुच कुम्भ पर रत्न हारावली,
होहु रंजित हृदय सारौ।
सघन तुब जघन में वजो रसनावली,
देहु सो मन्मथ नगारौ॥
स्थल कमल गंजने मम हृदय रंजने,
ललित पद पंकज निहारे।
हे मिष्टवादिनी कहो में हौं रिणी,
करो जावक चित्र भारे॥
राधिक प्रिया सो यह सु मधुरिपु कही,
वहु विध चारु रुचि चतुरवानी।
जयति पद्मावती रमण जयदेव कवि,
भारती सरस रस सानी॥

शोभाछन्द

पुनि पिय बोले ऐसे। बोलि उठे तिय जैसे॥ १॥

कवित्त

काहे को मयंक मुखी संक पंक भोय रही
गोय रही चराचर धरा दिशि ध्याइयै।
भारी स्तन जघन प्रदेश है सुदेश तेरौ
मेरौ हिय घेरो करि छायौ है सदाइयै॥
एक जो अतन सो कुसत निज तन करि
पैठत न वैठत इतै पै रिस छाइयै।

हाय कहौ अहौ रहौ नित मम लहौ नाहि
झूठे अकलंक कौ कलंक लंक लाइयै ॥ २ ॥

शोभाछन्द

सुनि डूबी रिस माहीं । कासं वस्तु मुख नाहीं ।
लखि पिय बोलि ऐसें । तुष्ट होय तिय जैसें ॥

सवैया

सुन्दरि मन्दिर तै निकसौ अपराधी हों तौ अपराध निवारौ ।
शुभ दन्तनि दारि विदारि नखंकनि बांधि भुजानि सुजान सुधारौ ॥
उरजें गुरजें उर मारि पछारहु डारहु हे जसों सेज पै प्यारौ ।
अपुकों सुख ज्यौं दुख दीजियै त्यौं पर काम कसाई कों सौंपि न मारौ ॥५

चौपाई

पुनि कही मेरे जात है प्रान । ज्यावहु दै अधरामृत पान ॥ ६ ॥

दोहा—भौंह मोहनी शशि मुखी नागिन लौ डसि जात ।
ताहित तेरौ अधर मधु सिद्ध मंत्र विख्यात ॥

क०—वृथा मौन कौन काम कीनो भाम वामता सों,
थापि ये प्रपंच अब पंचम अलापियै ।
मोठें वतरावौ आवौ रातहि वितावो जिन
जरें कों जरावौ मत रति सुख आपियै ॥
हम तो सनेही भये तो विन विदेही भारे
ठाढ़े कर जोरें औ निहोरें ताहि तापियै ।
डीठि कै रिसोंही जिन पोठ दे दुखौं ही यह
मेरै काम ज्यौंही त्यौंही मारो महा पापियै ॥

चौपाई

पुनि कहि कामहु अनुग तिहारौ । तुम ही करो जग जीत्यौ सारौ ॥

सवैया

लाल रसाल जपा सम ओठ कपोल अमोल मधूक मनौ ।
लोचन तो दुख मोचन कंज से दंत लसंत है कुन्द जनौ ॥

नासा मिलै कछु फूल तिलै शर सांच ये काम के पांच गनौ।
तेरे प्रसाद कों पाय अनादिते मारयौ है मारनै विश्वघनौ॥

शोभाछन्द

पुनि यह पिय सु उचारी। तो सम और न नारी॥

कवित्त

तू ही है तिलोत्तमा मनोरमा है छवि तेरी,
डोठि है मदालसा रसाल लाल होठ यै।
रंभा युग उरु लागें मेनका है रुप आगें,
उर उरवसी लसी मेरौ मन मोहि यै॥
सुरस कलाबती सी सोंहे भोंहे चित्रलेखा,
चंद संदीपनी सी मुख की शोभा सोहियै।
एरी सुखकारी प्यारी कौंन सुर नारी जों न,
तेरे संग रंग भरि रहत न जोहियै॥

इति श्री गीतगोबिन्द भाषायां दशमसर्ग:

सोभा०—बहु विनती करि प्यारी। करी प्रसन्न मुरारी॥
दोऊ परस्पर भीने। मिलि सिंगार सुकीनें॥
कुंज माहि सजायै। बैठे जा पिय आयै॥
मान कनौं डसु छाई। राधा तहां न आई॥
सांझ समय ह्वै आयौ। तब ताहि सखी सुनायौ॥

अष्टपदी

कहे निहोरि वचन वहु तोसों पगनि परै वनमाली।
अब तौ वेतसि कुंज मंजु मे सेज विराज अली॥
तजौ न मधुरिपु अनुगहि अनुसरि राधिके॥ध्रु०॥
घन जघन स्तन भार भरी तू मन्द मन्द चल राधा।
पायन मांहि रणित मणिनूपुर सुनि होय हंसनि वाधा॥
ललित तियनि मन मोहन हारी सुनि पिय वानी प्यारी।
कामदेव की डोंढ़ी वजबत कुहकत कोकिल कारी॥

पौन पाय हालत तरु शाखा हलत हाथ लखि लीजै।
तोहि कहत चल प्रीतम के ढिग वेगि बिलम्ब न कीजै॥
पूछि देखि अपने कुच कुंभै हार विमल जल धारा।
सूचत है हरि कै परिरंभै मदन तरंग विकारा॥
रणहित सज्यौ शरीर धोर है लख्यौ सखिन सब आजै।
चल रसनावलि वजबत डींडिम चाहसनी तजि लाजै॥
स्मर शर सुन्दर नख धारी करसों गहि हाथ अली कौ।
चलौ वलय बाजै पिय चेतै ध्यान है तोहि चली कौ॥
श्री जयदेव कथन यह टारहु हार उदार सुनारी।
रसिक जननि के कंठ विराजौ नित भारी सुखकारी॥

सोभा०—अलि दिशि देखी प्यारी। तब पिय दशा उचारी॥

कवित्त—अहो कब ऐहैं काम कथा कों चलै हें विथा
टरि लपटैहैं प्रीति पैहें सुख रीषरी।
केलि कल कलासों रमैहैं दैहैं मोद घनौ
ऐसे हिय लोचै शोचै कहत हरी हरी॥
कवहू निहारि कंपै पुलकै हँसै पसीजै
दौरि उठि धावै गिरजावै तूं नरो नरी।
कुंज अंधियारी में मुरारी सुखकारी प्यारी
देखत यों राह उतसाह सों घरी घरी॥

सोभा०—क्यों करि चलौ अंध्यारी। तब अलि ताहि उचारी॥

सवैया०—अहो जे अभिसारिका कारिका
कोक की, शोक हरै अब लोकनि सों
तिनको परि पूरन प्रेम हि हेम है,
जोन मिटै नव नोकनि सों॥
यह ताहित आहि कसौटी सचौटो
की, नाहि तमी तमतो कनि सों
तहां दुति देह की लीक ही ठीक
अलीक सनेक ढुढ़ो जो कनि सों॥

सोभा०—रीझि कही ककु मागौं। अलि कही संग लागौ॥

वत्त—चली विध भली संग अलि के विलीक होय
ठाढो भई जाय सुख पुंज कुंज द्वार पर।
भूषण कनक के जड़ाऊ वने वानक सों
नगनि उज्यारौ अंधियारौ दूर दियौ कर॥
डीठ परौ नागर उजागर सकल गुन
देखि रही दुति दिशि दोष धरि रोस भर।
भौंहें हूं चढ़ाई कछु कांपत लजाई ताहि
सखी नें सुनाई वीर तोको है वधाई वर॥

अष्टपदी

केलि गृह मंजुतर कुंज माहीं अहो राधे माधव समीप चल
विलस रति रभस सुख हंसि-निथंभत नाहीं।
सेज नव दलन अशोकनि रसाला।
अहो राधे माधव समीप चल विलस कुच कलस तरल माला।
फूल कौ महल जहां रच्यौ तेही।
अहो राधे माधव समीप चल विलस कुसुम सुकुमार देही॥
सुरभि शीतल बहत मारुत घनेरे।
अहो राधे माधव समोप चल विलस रति उचित वाद्य तेरे।
छई नव पल्लवनि वेलि सारी।
अहो राधे माधव समीप चल विलस तुव जघन पीन भारी॥
मधु मुदित मधुप किलकनि छवीली।
अहो राधे माधव समीप चल विलस तू मदरस रसीली॥
मधुर तर पिक निकर कुहक छाई।
अहो राधे माधब समीप चल विलस दशन रुचि शुचि सुहाई।
यह सुपद्मावती सुख सुकाजा।
करहु प्यारे मंगल महान कहत जयदेव कविराज राजा॥

चौपाई

जौ कहे क्यों न पिय उठि आवत। तहां ताही यह सखी सुनावत॥

सवैया

अहो तोही सुमित्तहि चित्त में धारत, हार परयो न संभारै हू देही।
अधरामृत पान कराए सयान है, सो तौ विदेही है आप सनेही॥
प्रिय अंक बिराजहु राजहु गाजहु, संभ्रम त्याजहु माधव वेही।
अये भौंह चढ़ाय नचाय कें नैंन तें, लीने है मोल अमोलक जेही॥
सोभा०—तब यह सखी कह्यौ जो। राधा सांच लख्यौ सो॥
भय आनन्द सुछाई। पिय हि लखो मन आई॥
वसन समेट सुलोनें। नैंन चहूँ दिश दीनें॥
नुपुर वजावत भारी। पिय ढिग गमनी प्यारी॥

अष्टपदी

राधा वदन विलोक ही पिय बिविध विकारनि छायौ।
जनु सुख कंद चन्द पूरन लखि अधिक जलधि उमगायौ॥
हिय एक वसी तरुणि मुकुटमणि श्यामा।
देख्यौ हरि हरषत अनंग वस कोककलनि अभिरामा॥ध्रु०॥
मुक्ताहार विहार करैं उर ता करि सोहत ऐसें।
झज्झल फेन समूह सन्यौ यमुना जल पूर जु जैसें॥
श्यामल कोमल अमल कलेवर पीताम्वर सोहै य्यौं।
नील नलिन सों पीत पराग लपटि मन कों मोहै ज्यौं॥
तरल दृगंचल युक्त मनोहर वदन मदन उपजावै।
जनौ शरद सर कमल मांहि युग खंजन खेल मचावै॥
रवि मंडल सम कुंडल काननि मुख कमलहिं सुविकासें॥
फूलनि हंसति अधर पल्लव जनु रति में लोभ प्रकाशें।
जनु शशि किरन छुटी जल धरतें केश कुसुम युत ऐसें॥
चन्दन कौ वेंदा शिर सोहत तिमिर माहि विधु जैसें।
पुलकनि छयौ शरीर अधीरज केलि कलानि कौ चाहैं॥
मणि गण छए नए निरदूषण भूषण शुभग महा हैं॥
श्री जयदेव कथन वैभवसों द्विगुन अलंकृत कीनें।
हिय में धरि हरिकों नाबहु शिर सुकृत सार कहि दीनै॥

सो०—कृष्ण विकार वखाने। सुनि तिय के रस सानें।

सवैया

चलि चंचल नैंन जु काननि लों चित, ए पिय की दिशि हार परैं।
चक चौंधि सी पाय गए विछयों जनु, राह के थाके वटो ही डरैं॥
कछु देखि दशा पिय की विलखे बहु, आंसुन के परवाह ढ़रें।
मनौ खेद कौ स्वेद कि नेह घटानि ते, मेह महानहि आनि झरे॥
कान खुजावत हास दवावत, कुंज के बाहरें आली गई।
सेज समीप सनै सनै श्यामा हूँ, चौंकत सी जाय ठाढी भई॥
मित्त के चित्त चित्तौन रु हांसी सु, कामकी गांसी सी ताहि दई।
प्रीतम कौ मुख देखत लाजहू, लाजि भजो विन काज तई॥

इति श्रीगीतगोविन्दभाषायां वैष्णवदासरसजानी कृतायां एकादशसर्गः।

शोभाछंद—वाहर सखी पधारी। लाजहु भाजि सिधारी॥
काम ने धूम मचाई। अधरनि हँसनि सुछाई॥
हिय में रस घमड़ानौ। प्रीतम लखि हरखानौ॥
डीठि सेज दिशि धारी। यौं पिय ताहि उचारी॥

अष्टपदी

किसलय सेज रची हे कामिनि चरन कमल अपु धारौ।
तुव पद पल्लव की वैरिन यह याकी मनी उतारौ॥
छन भरि प्यारे माधव अनुगहि अव भज राधिके॥ ध्रु०॥
कर कमलनि कर चरन पलोयें वहुत दूर तुम आईं।
अनुगत नूपुर ज्यों मोहू कौ राखौ चरन सदाई॥
वदन चंद तें श्रवत मंदनहि प्यावहु वचन सुधा कौ।
कहौ विरह ज्यौं दूर करो मैं कुचरोधक अँगियाकौ॥
मो मिलवे की चाह सज्यो यह अति दुराय पुलकायौ।
या कुच कलशहिं मो उर राखौ मदन ताप हों छायौ॥
अधर सुधाकौं प्यावहु भामिनि ज्याबहु दास मरथो सौ।
तोही में मन मिलन भयौ नहिं विरह दवाग जरथो सौ॥

हे शशिमुखि बजबहु रसनावलि ललित सुरनि करि छाई।
कोकिल धुनि सुनि सुनि श्रुति फूटे हरि एसो विकलाई॥
विफल क्रोध करि विकल कियो मैं अब यह डीठि तिहारी।
देखि मोहि दबकत लजात जनु अभूबांक तजि प्यारी॥
श्री जयदेव कथन यह पद पद माधव मोद वखान्यो।
रसिक जननि कौ सुख विस्तारौ रतिरस भावनि सान्यौ॥

शोभाछन्द

पिय विकार सब गाए। सुन तिय के मन भाए॥

क०—भुज रस भीनो गहि लीनो है तिया को पिया,
खीजाही सो सेज पर डारी सकुमारी है।
मिलिवे में अन्तर कियो है पुलकान आनि,
देखने में मेख सी निमेषनि ने पारी है॥
पान अधरान के कों भान दीनौ वतरान,
मोद नें विनोद केलि सोधि कें निकारी है।
वाधा हू रसीली जहां सुरत रंगी ली ऐसी,
कीनी है छवीली छैल छलनि संवारी है॥

सो०—प्रेम केलि सुखकारी। दिखई है इहां प्यारो॥
अचिरज मिलन जु जो है। अब कवि वरनत सोहै॥

क०—भुजनि सो बाँधि डारौ कुचन सों मीडि मारौ,
नखनि विदारौ भारौ प्यारौ सकुमारौ अति।
दशन वसन कौ डसन कियौ दसन सों,
लाडनि सों श्रौनो तई ताडन की कीनी रति॥
केश गहि हाथ ब्रजनाथ हि नवायौ नारि
अधर के पान सों महान मोह्यौ प्राण अति।
एते पर श्याम सुख पायौ परिनाम अहो,
कहौ यह कैसी अभिराम वाम कामगति॥

सो०—अब विपरीत वखानै। जो रसिकहि सुख ठानै॥

सवैया

रति युद्ध समें अति क्रुद्ध भये दोऊ आपस में जय की मन धारी।
पुनि प्रीतम जीतन के विपरीति रची रति सुन्दरि काम कुमारी॥
जड जांघ भई भुज थांकि गई दृग, मूँदि लए उर कांपत भारी।
यह तो रसनायक नायक कौ सुतौ, ऐसें कैसें अहो पाय है नारी॥

सो०—अधर पिवत सुख जो है। अब कवि वरनत सोहै॥

क०—मृगमद चिते मृगनैनी के पयोधरनि,
मीड़त मुरारि उर धारि गाढे मसकी।
मोद बढ़वारते संभार न शरीर की हे,
ताकौ मुख पीवत ही जीवत है रसकी॥
पुलके कपोल जे अमोल गोल मंडल से,
मूँद रही नैंन ककु कसकसी कसकी।
निकसत न बात सिस्यात विकसात रद,
पाई है विहारी प्यारी भारी भाग वसकी॥

सो०—अब सुरतान्त वखानै। जो रसिक हिं सुख सान्यै॥

सवैया

उरतौ नख लाल सु अंकनि अंकित, ढोठि हु नीद सो घूमि घूमारी।
अरुणाई हू है अधरान की धोई सी, वेनी हूँ फूल गुंथी विथुरारी॥
रसनाबलि ढीली रसोली रंगीली की बात छवीली लजीली निहारी।
शर काम के ये लगि श्यास के नेंननि वेध्यो हियो यह कौतुक भारी॥

सो०—देखि श्याम सुख पायौ। तव यह तिय हि सुनायौ॥

क०—एहौ मृग नैंनो मुद देनी यह वेनी खुली,
रुली अलकावली भृंगावली सी कंज मुख।
मंडल से गोल यै कपोल छाये श्रमकन,
दंशनि अधर हार टूटे हैं विहार दुख॥
एके भुज जांघनि की रागनि लगाय रही,
एक ही सो दावें कुच रुचि सौं न जोरै रुख।

लाजत सी माथों धुनि त्रासति सो भौंहनि सों,
धरें मीड़ि माला तु रसाला वाला देत सुख ॥

सो०—यों रति अंत उचारी। राधा देखत भारी ॥
सादर पिय हि बखानी। हिय आनन्द सुसानी ॥

अष्टपदी

हे यदु नन्दन चन्दन से कर मृगमद पत्र बनाय द्यो।
मनसिज के मंगल कलशा सें कुचनि मांहि रुचि छाय द्यौ ॥
यह राधिका यदुनन्दने भाखि हृदयानन्दनै ॥ ध्रु० ॥
रति नायक शायक से लोचन चूमिजे कज्जल नाशिये।
अलि कुल गंजन अंजन सो पिय तिन को फेर उजासियै ॥
इन मम श्रुति मंडल में कुंडल पहिरावौ मन मोहनें।
नेंन कुरगंनि कों अटकावन कामपासि से सोंहनें ॥
सखियनि बीच न हंसो करावहु निरवाह हु कछु प्यार हो।
वदन कमल पर भ्रमरा वलि सी अलिकावलि सु संवारि हो ॥
शशि सम शीश-राह सो मृगमद ता को तिलक बनाद्यौ।
अहो कमल लोचन दुख मोचन श्रमकन पोंछि मिटाय द्यौ ॥
काम चंचर से रुचिर चिकुर मम शिखी शिखंड से सोहनें।
रति में खुले तिनै फूलनि सों रचौ ज्यौवं मन मोहनें ॥
सरस सघन जघन स्थल मेरे कंदर काम करीनि के।
तहां मनिरसना वसन सु भूषण पहिरावहुन नरोन के ॥
श्री जयदेव बचन यह मंडन जो सनेह भरि गाय हैं।
हरि पद सुमिरन सुधा पाय सो कलि मल ताप मिटाय है ॥

क०—कुचन पै पत्रिका बनाबौ सुख पावौ मोत,
खौरिहू अमोलनि कपोलनि पै कीजियै।
कटि रसनावली सुधारौ तोरनावली सी,
वेनी मुद देंनी मांझ फूल गूंथ दीजियै ॥
मोरी कर चूरी गुन पूरी पहराव प्यारे,
पायन में नूपुर संवारि अब लीजियै।

ऐसैं रससानी वतरानी राधारानी जब,
मौहन विनानी त्यौं ही ठानी ज्योंही जीजियै ॥

दोहा—जयदेव रु हरिदेव में भेव तनिक जिन ठान।
तिन के बोल अमोल सब सुनिये सबहि प्रमान ॥

सवैया

गुन गान कला कल कौशल जो अरु, कृष्ण कौ ध्यान महान जितौ।
रससार शिंगार कौ सारजु है अरु, काव्य की रीति कौ गीत कितौ ॥
जयदेव के सुद्ध सुभेवनि सों अब, लीजै सुधो सब सोधि तितौ।
पर जे हरि में अनुरक्त विरक्त है, तेई सुनौ करि भक्ति इतौ ॥

क०—तौलौं मधु तेरी न मधुरता मधुर कछु,
एरी सरकरा तो मे आहि करकरा गति।
दाख तोहि देखि हैं को अमृत हू रह्यो भरि,
अरे छीर तेरौ रस नीर तोमें का कोरति ॥
अये आम बिना काम काहे कों तूं रोवत है,
तरुनी अधरनें रसातल को धरी मति।
जो लों या जगत में ही जग मगै जगत सी,
कवि जयदेव कृत काव्य कमनीय अति ॥

दोहा—भोजदेव पित मात मम रामादेवी नाम।
बन्धु पराशर आदि के उर यह करौ सुधाम ॥

छ०—श्रीमहाप्रभु चैतन्य तिन की दया फली।
कलि अवतार सुधन्य पतितन बनो भली ॥
जयति गीतगोविन्द गाबहु रसिक अहो ॥
श्रीप्रियादास कविभूप रसिकनि मुकुटमनी ॥
जग यश छयौ अनूप तिन की कृपा कनी।
जयति गीतगोविन्द गाबहु रसिक अहो ॥

श्री हरि जीवन नाम मेरे गुरु सुमहा।
तिन कौ कर अभिराम नित मम शीश अहा।

जयति गीत गोविन्द गावहु रसिक सही ॥
जे जन रसिक रसाल तिन के कंठ वसौ
युगल केलि के माल दश दिश माहि लसौ ।
जयति गीत गोविन्द गावहु रसिक अहो ॥
दास वैष्णवदास भाषा तिहं सुकरी ।
श्री वृन्दावन वास निसदिन मन हि धरी ॥
जयति गीत गोविन्द गावहु रसिक अहो ॥
परौ जगत दुखरासि खोटे कर्म करे ।
कृपा करहु अनयास दरसन देहु हरे ॥
जयति गीत गाविन्द गावहु रसिक अहो ।

दो०—दासवैष्णवदास यह रसिकन हित सुखरास ।
भाषा करि वर्नन कियौ सुख हिय होय विकास ॥

इति श्रीगीतगोविन्द कबिराजजयदेवकृत भाषायां वैष्णवदास रस जानी कृतायां द्वादशसर्गः संवत् १७७७ पौषवदी २ लिखितं ॥ जयदेव ॥

ग्रंन्थकार श्रीवैष्णवदासजी का परिचय परम्परा

श्रीमन्नारायण, श्रीब्रह्मा, श्रीनारद, श्रीवेदव्यास,
श्रीमध्वाचार्य, श्रीपद्मनाभ, श्रीनरहरि, श्रीमाधव,
श्रीअक्षोभ, श्रीजयतीर्थ, श्रीज्ञानसिन्धु, श्रीमहानिधि,
श्रीविद्यानिधि, श्रीराजेन्द्र, श्रीजयधर्म, श्रीब्रह्मण्य,
श्रीपुरुषोत्तम, श्रीव्यासतीर्थ, श्रीलक्ष्मीपति,
श्रीमाधवेन्द्र, श्रीईश्वर,

श्रीराधाकृष्णमिलित विग्रह, प्रेमपुरुषोत्तम,

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु,

|

श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी

|

श्रीनिवासाचार्यप्रभु

|

श्रीमनोहरदासजी

|

श्रीप्रियादासजी

|

अस्य पौत्र
तथा हरिजीवनजी के शिष्य

श्रीवैष्णवदासजी

रसजानी

मुद्रक राज नारायन अग्रवाल, मॉडर्न प्रेस नमक की मन्डी, आगरा ।

श्रीमाध्वगौडेश्वर ग्रंथमाला से प्रकाशित पुस्तकें—

१—माधुरीवाणी—(श्री माधुरीजीकृता)

२—मोहिनीवाणी—(श्री गदाधरभट्टजीकृता)

३—सुहृद्वाणी—(श्री सूरदासमदनमोहन की)

४—अर्च्चाविधि—

५—वल्लभरसिकजी की वाणी—(श्री वल्लभरसिकजी की)

६—प्रेमसम्पुट—(श्री विश्वनाथ चक्रवर्त्तीजी कृत)

७—भक्तिरसतरंगिणी—(श्री नारायणभट्टजी कृता)

८—श्रीहरिलीला—(श्री ब्रह्मगोपालजी कृता)

९—गीतगोविन्दपद—(श्री रामरायजी कृत)

१०—गीतगोविन्द—(श्री रसजानिवैष्णवदासजी कृत)

यन्त्रस्थ—

१—श्री चैतन्यचरितामृत—(श्री सुबलश्यामजी कृत)

व्रजभाषा में

२—गोवर्द्धनशतक—(श्री केशवाचार्य्यजी कृत)

प्रकाशित होने वाले—

१—व्रजभक्तिविलास—(श्री नारायणभट्टजी कृत)

२—गोविन्दभाष्य—(श्री बलदेवविद्याभूषणजी कृत)

३—भागवत की भाषा—(श्री वैष्णवदासजी कृता)

४—भक्तिग्रन्थावली—(श्री विश्वनाथ चक्रवर्त्तीजी कृता)

समर्पणपत्र

श्रीश्रीराधारमणचरणदासदेवस्यानुचरप्रवरस्य, सकलदेशप्रसिद्ध-
कीर्त्तिराशेः, प्रेममात्रसर्वस्वकृतस्य, निरन्तरसात्विकभावा-
वल्याविभूषितस्य, दीनतासागरस्य, मधुरस्वरालापैः
सर्वदागौरकीर्त्तनकर्त्तुः, श्रीरामदासेतिमधुर-
नाम्ना प्रसिद्धस्य, मदीयआराध्यदेवस्य,
श्रीगुरुदेवस्य, बाबाजिमहाराजस्य
प्रीत्यर्थं

समर्पितेयंवाणी

मॉडर्न प्रेस, आगरा में छपी।